Chap. 7

समग्र मूल्यांकन एवं उपसंहार

मूल्यांकन

डॉ. जयसिंह 'व्यथित'जी के समग्र साहित्य सर्जन को दृष्टि पथ में रखकर यह कहा जा सकता है कि व्यथित जी निश्चित बहुमूखी प्रतिभा के धनी रहे हैं। उनके साहित्य सृजन में उनका संपूर्ण वैचारिक परिवेश तो है हि साथ में उनकी संवेद्य भावना परिकल्पनाएँ भी है, जो उनको एक उदार और मनस्वी सामाजिक व्यक्ति के रूप में प्रतिष्ठत करता है। उनके समग्र साहित्य के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि रचनाकार अपने सामाजिक दायित्व से कहीं अधिक अनुबंधित है न कि साहित्य सृजन की उच्चस्थ आचार्य संहिता से। उनका अध्ययन भी सत्संग और स्वाध्याय एवम् लोक संपर्क से अधिक संप्रक्त रहा है या कहा जा सकता है कि उन्होंने कहीं भी आवश्यक या अनावश्यक रूप से, प्रत्यक्षरूप से, अप्रत्यक्ष रूप से अपने पांडित्य का प्रदर्शन नहीं किया। इसका सीधा अर्थ यही आता है कि साहित्य की सृजनात्मक भूमिका उनके व्यक्तित्व की भावात्मक संकल्पना के साथ जुड़ा है।

साहित्य सृजन की सायास और पूर्वाग्रही कही संहिती से नहीं जुड़ा और यही कारण है कि कवि न तो प्राचिन और पारंपरित काव्य शास्त्रीय अनुबंधनों का हामी रहा है और नहीं कला प्रदर्शन हेतु उसका कोई दुराग्रह ही रहा है। वह एक लोकाग्रही शिष्ट नागर कवि हैं, जो नगर की विकसित सभ्यता से संप्रत होकर ग्राम्यांच्यलि संस्कृति की सुगंध को साहित्य के माध्यम से व्यक्त करता रहा है। कवि ने कहीं भी काव्य के गुण, दोष, छंद, अलंकार, रस, भाव, नायिका भेद, ऋतु वर्णन, नख-शिख वर्णन तथा पिंगल विधान का पूर्व निश्चित प्रयोग नहीं किया गया है और जहाँ इस प्रकार के कला सौष्ठवी शास्त्र संमत, निबंधन दृष्टिगोचर होतें हैं, वहाँ कवि का कोई साग्रही प्रयास न होकर उसकी मनस्वी भावात्मक चेतना का ही प्रकाशन आभाषित होता है।

कवि के समग्र सृजन को हम निम्नांकित विचार खण्डों में वर्गीकृत कर सकते हैं।

(1) धर्म एवं संस्कृति के प्रति लगावः-

डॉ. जयसिंह 'व्यथित'जी का अधिकांश प्रबंधात्मक काव्य उनकी सांस्कृतिक अवधारणा को सामने रखता है। भारतीय वांग्मय को समृद्ध संपदा जो परंपरा से कवि को ग्राहि रही है तथा जो उसके संपूर्ण परिवेश को प्रभावित करती रही है। उसमें वह स्वाभाविक रूप से मग्न दिखाई देता है। धर्म के प्रति उसकी उदार मानसिकता रही है। कहीं-कहीं कवि के कथ्य में उसकी ठकुराहट ठसक आभाषित होती है। उसके काव्य में अनेक स्थानों पर उसका निर्णायक उद्घोष, उसकी अभिनव और कुलीन वंश परंपरा की ठसक को या कहा जाय के उसके वर्णगत् स्वाभिमान को प्रदर्शित करती है किन्तु यह अह्म भाव यदा-कदा कम ही दिखाई देता है।

कवि संवेदना के भावात्मक स्तर तक धार्मिक प्रवृत्तियों से अनुबंधित है। वह प्रभू की असिम सत्ता में विश्वास रखता है तथा साकार भक्ति एवं सत्संगी धर्माचरण

की संगती में आस्था रखता है। चूंकि कवि अवध की पून्यतिर्थ अस्थली से संलग्न रहा है। इसलिए उसकी संपूर्ण मानसिकता पर अवध नरेश श्री राम के ईश्वरीय प्रभुत्व का प्रभाव सर्वत्र देखा जा सकता है। वेसे तो मैथिली शरण गुप्त ने ठीक ही कहा था कि- ''**राम तुम्हारा व्रत स्वयं ही काव्य है।**'' इसी रचनात्मक प्रवृत्ति से संलग्न होकर डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी ने भी राम काव्य के पौराणिक मिथक को अपने ढ़ंग से संपूर्ण समर्पित आस्था के साथ काव्यांकित किया है। 'कैकेयी के राम' प्रबंध-काव्य में मैथिली शरण गुप्त के साकेत का सीधा प्रभाव उनको उपर लक्षित होता है। उन्होंने अपने आदर्श पात्र श्री राम को पौराणिक ईश्वरतुकी सद्भावना से जोड़े भी रखा है और इस महान चरित्र की प्रासंगिकता स्थापित करने के लिए उसे प्राकांतक सामाजिक उत्थान का एक महान निर्देशक भी स्वीकार किया है। कैकेयी के प्रति उसकी मातृमय आस्था काव्य को अभिनव पहचान प्रदान करती है। जहाँ कैकेयी के मानसिक संकीर्णताओं को विस्मृत करते हुए उसकी आत्मग्लानि और उसके उदात् वात्सल्य प्रेम को सद्भावना के साथ प्रस्तावित किया है।

कविवर जयसिंह 'व्यथित' जी अपनी संस्कृति के प्रति भी समर्पित भावात्मक संहिति से जुड़ा है। गाँव की मिट्टी की सौंधी गंध वहाँ के कच्चे मकान, पगदंड़ियाँ, बाग-बगीचें, वहाँ के लोग, वहाँ के शिष्टता, सभ्यता और सहजता कवि में अनेक स्थानों पर अनूभव की जा सकती है। अवधी और भोजपूरी के लोक संस्कृति में जैसे कवि आकण्ठिय डुबा हुआ है और उसकी यही आस्था उसे आँचलिक लोकभाषा में लिखा हुआ समृद्ध साहित्य उसकी जनांचलिय आस्था का प्रतिक बनकर सामने आता है।

यदि तटस्थ रूप से अवलोकन किया जाय तो कवि की साहित्यिक लोकनगरी संस्कृति की संस्करण सीमा पर अधिष्ठित आभाषित होती है। लोक नगरी सभ्यता के बिच में खड़ा हुआ सधिस्थान से अपनी बात कहने के लिए बाध्य सा दृष्टिगत् होता है और यहि कारण है उसका नगरी सृष्टि साहित्य हिन्दी की सामिक साहित्य

चेतना प्रतिनिधित्व नहीं कर पाता और यही कारण है कि हिन्दी के स्थापित साहित्यकार के श्रेणी में उन्हें पहचाना नहीं जाता। उनका समग्र साहित्य धर्म और संस्कृति के अनंत आस्था से जूड़ा है किन्तु साहित्य की सामिक सृष्टि धारा में वह अत्यंत........... दृष्टिगत् होता है।

(2) सामाजिक चेतना के स्वर :

डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी के व्यक्तित्व में एक सहज नेतृत्व के गरिमा का आभाष अनुभव किया जाता है। वैसे भी कवि का सृजनात्मक साहित्य सामाजिक सरोकार से निरंतर जूड़ा हुआ है और उनकी इसी सामाजिक प्रवृति ने उन्हें शिक्षा संस्थाओं की स्थापना की, संकल्पना से जोड़े रखा है।

जैसा कि विगत पृष्ठों पर स्पष्ट किया जा चुका है कि डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी के कृतित्वों में कहीं भी कला प्रदर्शन का कोई पूर्वाग्रह अनूभव नहीं होता और नहीं होगा और सर्वत्र उनका सहज अंतर्मन यथार्थवादी दृष्टि को लेकर हमारे सामने आते हैं। जहाँ वे समान से सीधा सरोकार स्थापित करता है और अपनी उद्धात्त, भावात्मक दृष्टि को बड़ी विनम्रता के साथ व्यक्त करता है। परिणाम के दृष्टि से डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी का साहित्य बहुत विस्तृत है। गाँव, समाज और राष्ट्र के उन्नति में वे मात्र विचारक ही नहीं है किन्तु व्यवहारिक दृष्टि से उनके विस्तृत प्रदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता। इन्होंने जिस कट्टु यथार्थ की जमीन पर पैर जमाई है, उसी यथार्थ को उन्होंने अपने साहित्य सृजन में सत्यापित किया है।

उपसंहार

डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी का समग्र हिन्दी साहित्य उनके आदर्श अर्थवत्ताओं और उच्चस्थ मानवीय मूल्यों की निर्धारण से सरोकार रखता है। काव्य रचना उनकी न तो मजबुरी है और न ही प्रतिबद्धता बल्कि यह उनका एक सात्विक व्यस्न था या कह सकते हैं कि यह उनकी उद्धात परिकल्पनाओं का भावात्मक प्रकाशन था जो कविताओं के माध्यम से व्यक्त हुआ है।

मूलतः डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी मैथिल संस्कृति से जुडे हुए हैं। जहाँ उनका जन्म हुआ और जीवन पूर्वार्ध जहाँ व्यथित हुआ। परिवेश और परिस्थितियों का पूरा प्रभाव उनके साहित्य रचनाओं पर पड़ा। जिससे उनके साहित्य का वर्णन विषय और चिन्तन का दिशा निर्धारित हुई। जिस क्षेत्र से डॉ. व्यथित जी का आत्मिय संबंध रहा उस मैथिल संस्कृति की औचलिकता ने उनका दामन नहीं छोड़ा यही कारण है कि राम कथा उनके रूधिर में जन्मजात रूप से समाई हुई है। चूंकि व्यथित जी एक सामाजिक कार्यकर्ता हैं, शिक्षाविद् हैं, एक विशिष्ट वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसलिए वर्तमान युग की विभिषिकाओं से वे रूबरू हुए हैं और इसका सीधा प्रभाव उनकी मिथिकी रचनाओं पर देखी जा सकती है। अपनी इसी दृष्टि की तहत उन्होंने पौराणिक आख्यानों को नई संदर्भों में व्यक्त करके पौराणिक कथाओं उपादियता सिद्ध की है। यदि विषय और अभिव्यक्तिगत् वर्णीय का सम्यक अध्यन किया जाय तो अनेक स्थानों पर डॉ. जयसिह 'व्यथित' जी बिगड़े हुए, विरोधाभाषी जैसा या फिर अनर्गल विषयों को बल्लात आरोपित करते हुए से आभाषित होते हैं।

काव्य के मानद् मूल्यों की सही पहचान को डॉ. जयसिह 'व्यथित' जी ने कहीं भी स्वीकारा नहीं है। इसके दो कारण हो सकते हैं या तो भाषोन्मेषित साहित्य सर्जन करने के वे अभ्यस्त रहे हैं अथवा परंपरित काव्य शास्त्री मानव मूल्यों को समझने का प्रयास ही नहीं किया और यही कारण है कि साहित्य जगत में अधिक

चर्चित या समालोचित नहीं हो पाई है।

कविवर व्यथित जी एक बिखरे व्यक्तित्व का आभाष देते हैं। जहाँ वे बार-बार अपने खण्डित व्यक्तित्व को एक रक्षा कवच में सुरक्षित रखने का दंभ पालते हैं। उनके द्वारा व्यक्त उनका स्वयं का समानीत व्यक्तित्व उनकी मानसिक संकिर्णता को व्यक्त करता है। अनेक स्थानों पर अनावश्यक कथ्यों से एक निरर्थक विस्तार देकर साहित्य को बोझिल भी बनाया है और उसे अनेक बाह्य आडंबरों से भी जोड़ने का दंभ पाला है। इसी प्रकार उनका व्यक्तित्व भी अनेक आयामों में बिखरा हुआ सा प्रतित होता है। जहाँ वे किसी भी निश्चित निर्णय पर स्थिर नज़र नहीं आते। उनके समग्र साहित्य का अध्ययन करने के पश्चात् यह कहा जा सकता है कि जहाँ उनकी काव्य की भाव सम्पन गरिमा युक्त और वैविध्यपूर्ण दृष्टिगत् होती है, वहीं उनकी रसाग्रही काव्य चेतना भी उनके उदार व्यक्तित्व का प्रकाशन करती है।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी जो सोचतें हैं, वह लिखते हैं और जो लिखते हैं वह करते हैं अर्थात् उनके साहित्य कथ्य उनकी व्यवहारिक निष्ठाओं से जुड़ी होती है और यही कारण है कि कहीं-कहीं इस प्रकार की निष्ठाएँ इतनी अधिक हो जाती है कि कविता की रूप किसी राजनेता का भाषण जैसा आभाषित होने लगता है। सामान्यतः डॉ. जयसिंह 'व्यथित'जी कोई बड़े दार्शनिक, चिन्तक या सत्य के अधिकारी अन्वेषक नहीं है और नहीं उनकी कविताएँ किसी आध्यात्मिक निर्धारकी प्रथक प्रतिति ही कराती है बल्कि उनका समग्र साहित्य लोकभोग्य होने के कारण सहज, सरल और सामान्य के त्रिवेणी संगम पर गंगा स्नान सा करता प्रतित होता है। जहाँ इनके साहित्य में सादगी है, वहाँ निष्कपट सौह्रार्दय की भावना भी संनिग्ध है। आपके साहित्य में दूर-दूर कहीं भी गंभीरता का आरोपण अथवा साहित्यिक प्रदर्शन वृत्ति की धृष्टता कहीं भी दिखाई नहीं देती। उनका साहित्य वस्तुतः एक सहज मानव के स्वाभाविक किन्तु व्यापक दृष्टिपटल का लोक प्रकासन ही है।

जहाँ डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी पौराणिक पात्रों को मितिकिय संदर्भ साहित्य में संयोजित किए हैं, वहाँ भी उनकी नैतिक निष्ठाएँ तो सामने आती है किन्तु कविता का सामयिक प्रतिनिधित्व कहीं भी आरोपित नहीं होता। पौराणिक कथा प्रसंगों में कवि के मन के उद्धात विचार अनंत आस्थाएँ, विश्वास, सत्य, प्रियता और सामाजिक आदर्श के प्रति उनका विशेष आग्रह रहा है। डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी ने वस्तुतः साहित्य रचनाएँ किसी बहुत बड़ी साहित्यिक उपाधि अथवा सम्मान को प्राप्त करने के लिए प्रारूर्ध बनाकर नही की। दूसरा तथ्य यह भी है कि डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी के व्यक्तित्व पर कहीं भी कविता आरोपित नहीं होती किन्तु कविता की समग्रता पर डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी का सरल व्यक्तित्व सर्वत्र आभाषित होता है। उन्होंने अपने अह्म को स्थापित करने के लिए या अपने पांडित्य को प्रदर्शित करने के लिए कविताएँ नहीं की और ना ही उन्होंने स्वयं को बड़े साहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए कोई मोह ही पाला है। सत्य तो यह है कि उनकी कविताएँ उनके अंतस्थः सांस्कृति एवं सामाजिक धारणाओं की प्रतिक्रिया है। भाषा, रस, छंद, अलंकार, काव्य सौंदर्य, दोष, लक्षणा, व्यंजना आदि विशिष्टताओं की संयोजना सायास न होकर उनकी मानसिकता को उजागर करनेवाली प्रतित होती है।

डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी कविता करने के लिए कविता नहीं करते थे बल्कि अपने निजि मंतव्यों को रसागृही संज्ञा देने के लिए कविता करते थे। जो लोक सामान्य से अंतरंगता स्थापित कर सके और उनके सुख-दुख में सम्लित हो सके। व्यथित जी प्रस्तुत शोध-प्रबंध में उनकी हिन्दी साहित्य कृतियों का ही विवेचन प्रस्तुत किया गया है किन्तु डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी अपनी आँचलिक भाषा अवधी के प्रति भी विशेष आग्रही रहे हैं। अपने गाँव की मिट्टी की सुगंध उन्हें बार-बार अंतःकरण से आकर्षित करती रही है। उन्होंने अवधी में छोटे-बड़े अनेक ग्रंथों का सृजन किया है, जिनमें 'देस कै माटी', 'अवध सतसई', 'पुरखन कै बाति',

'राम-मार्ग', 'बड़की भाई', आदि उनकी अनेक कृत्तियों का उल्लेख किया जा सकता है। डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी ने अवधी भाषा में शोधात्मक अनवेषण भी किये हैं। उनके पुस्तक 'पुरखन कै बाति' में अवधी की पारंपरित भाषा का सौष्ठव उसका व्यकरणिक स्वरूप और विशेषकर अवधी के महावरें, कहावतें और लोकोक्तियों के साभीप्राय सोदाहरण विवरण देकर एक महत्वपूर्ण शोध कार्य सम्पन्न किया है। - जैसे-एक कहावत है-**"महिमा घटी समुद्र कय, रावन बसा परोस।"**[1]

संदर्भ- दुर्जन की संगति से अपमान के सिवाय और कुछ नहीं मिलता है। इस बात को बताने के लिए इस कहावत का उपयोग किया जाता है।

इस तरह प्रचलित एवं अप्रचलित ग्रामीय एवं सामाजिक परिवेश को जिवन्त करने वालें मुहावरें कहीं-कहीं कुछ अशिष्ट और अभद्र शब्दों से जुड़े महावरें भी उन्होंने व्याख्यायित किये हैं। जो मुहावरों के क्रम में अप्रासंगिक नहीं लगते।

जैसे :- **"गाँड़ि खौरही मखमले कै भगवा।"**[2]

संदर्भ- जब अभावग्रस्त आदमी दिखावटी फैशन करता है। तब इस कहावत का उपयोग किया जाता है।

इसी प्रकार-

"गाँड़ि हइयै नायँ हगइ क पक्का पे।"[3]

संदर्भ :- साध्य के अभाव में झुठे साधन की अभिलाषा करने वाले व्यक्ति के लिए इस कहावत का उपयोग किया जाता है।

"गरीबे के गाँड़ी म दाँत हो थै।"

संदर्भ :- धन-वैभव हीन व्यक्ति में दुर्गुण ही दुर्गुण अधिक होता है। इस बात को बताने के लिए इस कहावत का उपयोग किया जाता है।

"गांड़ी न लत्ता, पाना खायँ अलबत्ता"[5]

संदर्भः– निर्धन आदमी जब मौज-शौक करता है, तब इस कहावत का उपयोग किया जाता है।

समग्रतः यदि 'पुरखन कै बाति'' का विशलेषण किया जाय तो तथ्य स्पष्ट होता है कि डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी ने ग्रांम्यांचल में प्रचलित हर स्तर की कहावतें, मुहावरें एवं लोकोंक्तियाँ का बहुत ही औचित्यपूर्ण और सार्थक विवेचन प्रस्तुत किया है, जो उनकी तटस्थ शोध-प्रज्ञा का निर्देशन करता है। भाषा-विज्ञान और व्याकरण के अध्ययन कर्ताओं के लिए डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी यह ग्रंथ अत्यंत उपादेशय है।

'राम-मार्ग' डॉ. जयसिंह जी का पौराणिक खण्ड-काव्य है, जो समग्र अवधी भाषा में ही रचा गया है। यह अवधी भाषा तुलसीदास जी का नागर अवधी न होकर जायसी का ग्राम्य अवधी है। जिसमें अन्य बोलियों के प्रभाव दृष्टिगत् नहीं होते। 'राम-मार्ग' में कुल सात सर्ग है प्रथम बंदना सर्ग है तत्पश्चात् चिन्ता, यात्रा, स्वर्ण,मंथन और अंत में ऋण ज्ञापन किया गया है। बन्दना-सर्ग में देवताओं की उपासना एवं प्रार्थना के क्रम में ही उन्होंने 'पितृ-वन्दना' लिखकर अपनी संवेद्य भावनाओं का भी प्रकाशन किया है। 'पितृ-वन्दना' में डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी लिखते हैं-

''हमरे मन मा गहन अँधेरिया,
माई बाबू आवा तू।
तोहैं पुकारी बड़ी देर से,
सुरुज किरिनि लइ धावा तू॥1॥

दुइनउ जने दउरि झट आवा,
लइ कनिया दुलरावा तू।
राम-मार्ग पकरै हम चाही,
रहिया चला देखावा तू॥2॥

तू दुइनउ जन निश्चल मन कै,
निश्चल प्रेम देखावाथ्या।
आसिरबाद एही से माँगी,
सगरउ भरम मिटवाथ्या॥3॥

पूर्व-पुरूस पुरखन का सुमिरी,
आपनि व्यथा सुनाई थै।
बूढ़-पुरनियाँ आजा आजी,
सब से अरज लगाई थै॥4॥''[6]

वैसे खण्ड-काव्य महाकाव्य में देवों स्तुतियों की परंपरा पौराणिक काल से अग्रसर हुई है .किन्तु माँ और पिता के प्रति इस तरह की वंदना कवि की अपनी मौलिक सृष्टि है, जो उनके श्रद्धा भाव को अपने माता-पिता के चरणों में प्रस्तुत करता है।

'राम-मार्ग' खण्ड-काव्य में उद्धात् मानवी मूल्यों कि प्रतिष्ठा के साथ कवि प्रेम की पवित्र गंगा भी बहती है, जो सर्वत्र स्वर्हाद्रपूर्ण वातावरण का दृष्टि करता है।

जैसे-

कर्म क धूनी इहाँ रमउबै,
बँधबै प्रेम कै टाटी।
दया-धरम कै बगिया मँहके
महँकै लागे माटी॥

जती-सती सब आवइ लागे,
जरै प्रेम कै बाती।
पसु पक्षिउ सब मगन कुलांचैं,
घाटी भै अहिबाती॥

सब मिलि बइठि–बइठी के गावैं,
नाचैं ढोल बजावैं।
रामउ आइ ओही मा झूमैं,
उत्सव जनौं मनावैं।।

चिरई चिंगुल चिउँटियु माटउ,
सब मिलि सगुन विचारैं।
राम–मार्ग कै जीति सुनिश्चित,
एका सभै उचारैं।।

इस तरह कहा जा सकता है कि कविवर डॉ.जयसिंह 'व्यथित' जी ने जिस सामर्थ्य से हिन्दी खड़ी बोली में साहित्य सर्जना की है, उसी अधिकार से उन्होंने अवधी में भी अपनी साहित्यिक पहचान स्थापित की है।

'बड़की माई' डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी द्वारा अवधी भाषा में रचित कहानी संग्रह है, जिसमें कवि व्यथित जी ने अपनी कथा रचना के स्वरूप को प्रगट किया है। यहाँ उनका कथा का अवध प्रदेश के ग्राम्यांचल की पवित्र संस्कृति को कथांकित करता है। इस कथा संग्रह में 'घरे कै मुरगी', 'चरवाही', 'छीमी चोर', 'जिनगी कै मरम', 'ठाकुर पैदा होथेन', 'बड़की माई', 'माई कै माटी', 'ससुरे हम जाब' जैसी संवेदनशील कहानियाँ है, जो हमारी सांस्कृतिक धरोहर को सामने रखती है। यह कहानियाँ बतकही शैली में लिखी गई है और ऐसा प्रतित होता है जैसे कहानिकार स्वयं अपने परिकर एवं परिवार के बीच कह रहा है। भाषा के रूप में प्रयुक्त अवधी के प्राकृतिक छटा इसमें देखी जा सकती है।

डॉ. कोमलशास्त्री ने डॉ. जयसिंह 'व्यथित'जी के जीवन को आधार कथा बनाकर 'कर्मयोगी' नामक महाकाव्य का निबंधित किया है, जिसमें व्यथित जी को नायक बनाकर उनकी समग्र उपलब्धियों को विस्तार से इन्होंने काव्यांकित किया है। यह काव्य हिन्दी खड़ी बोली में रचित है। इसमें कहीं-कहीं प्रस्तुतिपूर्ण तथा

अतिशयोक्तिपूर्ण कथ्य भी सामने आई है, जो कवि की शुद्ध भावना की अतिसयता को ही व्यक्त करते हैं।

अंत में कहा जा सकता है कि बहुआयामी प्रतिभा के धनी एक ऐसे विरल साहित्यकार हैं, जिन्होंने हिन्दी, अवधी और गुजराती तीनों भाषाओं में अधिकार के साथ साहित्य सृजन किया है और अपनी मूलभूत पहचान को सुरक्षित रखा है।

डॉ. जयसिंह 'व्यथित' जी का साहित्य सृजन कला प्रदर्शन की वस्तु न होकर भावोनेमेष की उदार मनस्वी पर आधारित है, जहाँ कवि सर्वत्र सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् का अवलोकन करता है तथा आदर्शवादी स्थापना को प्रयास में सतत संलग्न रहता है।

संदर्भ-सूची

1. प्रधान संपा. डॉ. जयसिंह 'व्यथित'जी पुरखन कै बाति, पृष्ठ-129.
2. प्रधान संपा. डॉ. जयसिंह 'व्यथित'जी पुरखन कै बाति, पृष्ठ-47.
3. प्रधान संपा. डॉ. जयसिंह 'व्यथित'जी पुरखन कै बाति, पृष्ठ-47.
4. प्रधान संपा. डॉ. जयसिंह 'व्यथित'जी पुरखन कै बाति, पृष्ठ-46.
5. प्रधान संपा. डॉ. जयसिंह 'व्यथित'जी पुरखन कै बाति, पृष्ठ-46.
6. प्रधान संपा. डॉ. जयसिंह 'व्यथित'जी राम-मार्ग, पृष्ठ-29.
7. प्रधान संपा. डॉ. जयसिंह 'व्यथित'जी राम-मार्ग, पृष्ठ-68.